राष्ट्रभाषा हिन्दी की संघर्ष यात्रा के विविध आयाम

डॉ0 वीरेन्द्र सिंह यादव

विभागाध्यक्ष–हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग
डॉ0 शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय,
लखनऊ, उ.प्र–226017

भाषा राष्ट्र की शुरूआती जरूरतों में अपना विशिष्ट महत्व रखती है। राष्ट्र की मूल इकाई व्यक्ति होने के कारण उसके विचार संप्रेषण का कार्य भाषा के द्वारा ही सम्पन्न होती है। किसी भी देश की सर्वांगीण उन्नति तभी सम्भव है जब उसके विचार अपने हों, भाषा अपनी हो। वस्तुतः देश की सांस्कृतिक व सामाजिक एकता, साहित्य और कला का विकास सभी कुछ स्वदेशी भाषा से ही सम्भव हो सकता है। अतः जिस देश में जिस भाषा का प्रयोग नही होता या इसका अभाव है इसके साथ ही विदेशी भाषाओं का प्रभुत्व होता है, वह देश स्वाधीन होकर भी मानसिक दृष्टि से पराधीन ही होता है। अर्थात जिस राष्ट्र के पास अपनी संस्कृति नहीं होती वह राष्ट्र अंधा होता है, जिस राष्ट्र में अपना साहित्य नहीं होता वह बाधिर होता है और जिस राष्ट्र की अपनी भाषा नहीं होती वह राष्ट्र गूंगा होता है।[1]

भाषा का प्रश्न भावना का प्रश्न है और संकल्प द्वारा इस पर विजय प्राप्त की जा सकती है। भाषा न केवल विचार–विनिमय का माध्यम है, अपितु वह राष्ट्रीय संस्कृति की अनन्य पोषक तत्व भी है। अपने उदगार अविकल रूप से अपनी ही भाषा में शब्दबद्ध हो पाते हैं। अपनी वाणी में ही उन्हें समुचित अर्थवत्ता प्राप्त होती है। विदेशी भाषा में अनुवादित अथवा रूपान्तरित होकर वे अनुभूतियाँ विकलांग हो जाती हैं। इसलिए भाषा का प्रश्न राष्ट्रीय अस्मिता से जुड़ा हुआ है। राष्ट्र एवं संस्कृति के प्रति निष्ठा रखने वाले प्रत्येक नागरिक का यह पुनीत दायित्व है कि जिस प्रकार देश को विदेशी शासन से मुक्त किया गया उसी प्रकार राष्ट्रीय जीवन में विदेशी भाषा को मुक्त करायें।

पूर्व राष्ट्रपति माननीय डॉ0 शंकर दयाल शर्मा ने देश की सभी भाषाओं की वकालत करते हुए हिन्दी को सम्पर्क भाषा के रूप में इसकी भूमिका को सराहा। आपका मानना है कि ''हमारे देश की सभी भाषाएँ हमारे राष्ट्र की महान भाषाएँ हैं। कोई भी भाषा न तो एक दिन में तैयार होती है और न वह अगले दिन मिट जाती है। किसी भाषा के पीछे उस भाषा से जुड़े लोगों के अतीत के संस्कार काम करते हैं। हमारे देश की एक बहुत बड़ी विशेषता यह है कि हमारे यहाँ इतनी भाषाएँ हैं और उन भाषाओं के पास इतना समृद्ध साहित्य भी है। यह साहित्य हमारी चिन्तन परम्परा की अमूल्य निधि और हमें अपने अतीत के अनुभवों से जोड़ने वाली जबरदस्त कड़ी है। इस लिए मेरी दृष्टि में न तो कोई भाषा श्रेष्ठ है और न ही कोई भाषा किसी से हीन है। लेकिन जहाँ तक हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा बनाने की बात है, इसके बारे में मैं पं0 जवाहर लाल नेहरू द्वारा 30 जुलाई, 1956 ई0 को संसद में कहे गए शब्दों को उद्धत करना चाहूँगा। राज्यों के पुनर्गठन विधेयक पर बोलते हुए पं0 नेहरू ने कहा था, ''हिन्दी को किसी भाषायी विशेषता के कारण अखिल भारतीय भाषा नहीं बनाया गया, बल्कि इसलिए बनाया क्योंकि यह अधिकांश भागों में फैली हुई है।''[2]

राष्ट्रभाषा के बिना किसी राष्ट्र की कल्पना सम्भव नहीं। भारत की संस्कृति साहित्य और भावनात्मक एकता के लिए हिन्दी को एकमत से राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार कर

लिया गया। क्योंकि भारत के चतुर्दिक विकास का प्रश्न हिन्दी से ही जुड़ा है। सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी ही एक मात्र विकल्प है जो उत्तर,दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक देश को एक सूत्र में पिरोये रख सकती है। जनभाषा के रूप में हिन्दी के प्रति देशवासियों का स्नेह और आदर सुविदित ही है। यह एक वैज्ञानिक भाषा होने के साथ ही इसका कार्यक्षेत्र बहुत विस्तृत और व्यापक है। इतना सब कुछ होते हुए भी कुछेक स्वार्थी एवं विघटनकारी तत्वों द्वारा यदा–कदा, यत्र–तत्र हिन्दी का विरोध किया जाता है उसके लिए सुनिश्चित षडयन्त्र रचा जाता है जिससे हिन्दी के विकास में नित नई बाधाएँ उत्पन्न होती हैं। वास्तव में राष्ट्रभाषा हिन्दी के लिए यह समय संक्रमण काल के रूप में जाना जाएगा। कुछ हद तक हिन्दी की उपेक्षणीय स्थिति के लिए मूलतः हिन्दी क्षेत्र वाले ही दोषी हैं। सचमुच यह हिन्दी का दुर्भाग्य ही कहा जाएगा कि आज उसके लिए अपने ही पराये बनकर उसको क्षति पहुँचा रहे हैं। परिवर्तन के इस मोड़ पर हिन्दी की रक्षा, उत्थान और विकास का दायित्व अलग–अलग अकेले दलीय प्रयासों पर नहीं छोड़ा जा सकता। यह पूरे राष्ट्र की अस्मिता का प्रश्न है इसलिए सभी को मिल–जुल कर इसका हल निकालना होगा।

हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने की मांग कुछ नई नहीं है। भारतेन्दु से लेकर वर्तमान तक इस मांग का आधार यही रहा है कि हिन्दी जनता की भाषा है, बोलने, लिखने और समझने में वह सरल है, हिन्दुस्तान की अधिकांश जनता अभी भी उसे बोलती और समझती है। अपनी मांग को पुष्ठ करने के लिए हिन्दी–भाषियों ने जनता को अपनी कसौटी बनाया था। उन्होंने राष्ट्रभाषा की समस्या को जनतांत्रिक ढंग से ही सुलझाने का प्रयत्न किया था। लेकिन इधर कुछ वर्षों से यह परिस्थिति बदल रही है। साहित्य सम्मेलन के मंच से हिन्दी–हिन्दुस्तान का नारा लगाकर अपनी भाषा के प्रयास को संकुचित करने और उसके सहज विकास को रोकने का प्रयास किया गया है। एक तरफ तो हम गर्व के साथ कहते रहे हैं कि हिन्दी आम जनता की भाषा है जिसके बोलने वाले सभी जातियों और धर्मों के लोग हैं, दूसरी तरफ राष्ट्रीयता के नाम पर साम्प्रदायिकता का जहर फैलाने वाला यह नया हिन्दू राष्ट्रवादी दलभाषा को धर्म से जोड़कर हिन्दी को जनता की भाषा के पद से हटा देना चाहता है। ऊपर से देखने से मालूम होता है कि ये हिन्दू राष्ट्रवादी हिन्दी के समर्थक हैं, जो उसका प्रसार और विकास चाहते हैं, वास्तव में इनसे बड़ा शत्रु हिन्दी का कोई दूसरा नहीं हो सकता। राष्ट्रों की तरह भाषा का विकास भी जनतांत्रिक आधार पर होता है, जनता की उपेक्षा करके फासिज्म को आधार बनाने पर राष्ट्र की तरह भाषा का भी सत्यानाश होना अनिवार्य है। हिन्दी का सत्यानाश करना तो विधाता के लिए भी कठिन होगा। विधाता की इच्छाओं के एकमात्र टीकाकार ये हिन्दू– राष्ट्रवादी उसके विकास में कुछ देर के लिए बाधा जरूर डाल सकते हैं।[3]

डॉ0 राम विलास शर्मा की हिन्दी के प्रति जो भी राष्ट्रवादी मान्यता हो लेकिन यह तो निश्चित है कि विश्वभर की भाषाओं की तुलना में नए आंकड़ों के अनुसार हिन्दी के बोलने वालों की संख्या निरन्तर बढ़ रही है। हिन्दी स्वाधीनता प्राप्ति के काल में भारतीय गणराज्य की भाषा के रूप में स्वीकृति की गई है। पर भारत में अंग्रेजी राज से पहले ही उसे देशवासियों ने, बिना किसी प्रकार के विरोध या हिचक के, अपनी राष्ट्रीय भाषा के रूप में मान्यता दे रखी थी। सच पूछिए तो हिन्दी भाषा का उद्भव और विकास भारतीय जनता की अपनी निजी आकांक्षा से ही हुआ था। इस विशाल देश के करोड़ों निवासियों को अपने विचारों के आदान–प्रदान के लिए एक सरल, सुबोध एवं समान भाषा की जरूरत थी। हिन्दी उसी जरूरत को पूरा करने के लिए ही जन्मी थी। लेकिन इन सब अच्छाइयों के बाद भी स्वतंत्रता के बाद सबसे पहला प्रश्न राष्ट्रभाषा और राजभाषा के सम्बन्ध में उठा। हिन्दी का

राष्ट्रभाषा के रूप में प्रयोग भारतीय संविधान में कहीं नहीं है।[4]

हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में भारतीय स्वतंत्रता–आन्दोलन के समय यहाँ के राजनेताओं ने मान्यता दिलाने के लिए इसे इसलिए चुना कि यह सम्पूर्ण राष्ट्र को एक सूत्र में पिरोने का कार्य करेगी। उनकी मान्यता थी हिन्दी राष्ट्रभाषा के आसन की सच्ची अधिकारिणी है। इसके लिए प्रथम तो यह कहा जा सकता है कि हमारी मातृभूमि की भाषा होने से इसके प्रति पारिवारिक लगाव सा है। दूसरा इसे बोलने वालों की संख्या भी बहुत अधिक है। इसके साथ ही यह एक सरस, सरल व वैज्ञानिक भाषा है। इसका साहित्य बहुत समृद्ध होने से यह देश की साहित्यिक,सांस्कृतिक व सामाजिक एकता की परिचायक भी है। यह प्रांतीय अथवा क्षेत्रीय भाषाओं के साथ सहयोग करती हुई चलती है, इस कारण प्रांत और केन्द्रीय प्रशासन तथा अन्य सामान्य कार्यों के लिए प्रयोग में कोई परेशानी नहीं होती है। विदेशों में इसकी बढ़ती हुई प्रगति को देखते हुए अब इसे राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार कर लेना आवश्यक हो गया है।

स्वतंत्रता आन्दोलन को देशव्यापी बनाने के लिए आवश्यकता इसकी थी कि कोई ऐसी भाषा चुनी जाए, जिसके माध्यम से स्वाधीन भारत का उद्घोष सम्पूर्ण देश में फैल सके। समय की मांग को देखते हुए, भारतीय नेताओं ने, चाहे उनका सम्बन्ध देश के किसी भी कोने से रहा हो, यह अनुभव किया कि सारे देश की भाषा यदि कोई हो सकती है तो वह हिन्दी है और हिन्दी को ही सम्पूर्ण देश के लिए सम्पर्क भाषा बनाना होगा।[5] यहाँ सबसे महत्वपूर्ण बात यह कि हिन्दी को राष्ट्रभाषा का दर्जा या गौरव दिलाने में जिन भाषा विज्ञानिकों एवं शुभचिन्तकों ने सहयोग दिया वे हिन्दी भाषी क्षेत्रों के नहीं थे। इस कार्य का श्रेय सबसे पहले हिन्दीतर प्रदेश बंगाल के नेताओं का नाम आता है। सन् 1818 ई0 में ब्रह्म समाज के नेता श्री केशव चंद सेन ने अपेन लेख में कहा था कि ''भारतीय एकता का उपाय है सारे भारत में एक भाषा का व्यवहार हो। अभी भारत में जितनी भाषाएं प्रचलित हैं उनमें हिन्दी लगभग सभी जगह प्रचलित है। इस हिन्दी भाषा को अगर भारत वर्ष की एक मात्र भाषा बनाया जाए तो यह काम सहज ही और शीघ्र सम्पन्न हो सकता है।[6]

स्वतंत्रता आन्दोलन के समय हिन्दी को राष्ट्रभाषा की वकालत करने वाले किसी एक क्षेत्र से सम्बन्ध नहीं रखते थे, बल्कि वह भारत के विभिन्न राज्यों के निवासी थे। इनमें से महाराष्ट्र के लोकमान्य तिलक, गुजरात से महात्मा गांधी, बंगाल से रवीन्द्रनाथ ठाकुर, केशव चन्द्र सेन, कश्मीर से पं0 जवाहर लाल नेहरू, पंजाब से लाला लाजपत राय, दक्षिण के चक्रवर्ती राजगोपालचारी आदि अनेक नेताओं ने एक स्वर में हिन्दी को राष्ट्रभाषा घोषित करने की प्रबल मांग की। यही कारण था कि हिन्दी स्वतंत्रता आन्दोलन में शंखनाद की भाषा बनी। महात्मा गांधी ने कलकत्ता में 27 दिसम्बर, 1917 ई0 को अपने भाषण में भारतीयों को सम्बोधित करने हुए यह घोषणा की कि ''आज की पहली ओर सबसे बड़ी समाज सेवा यह है कि हम अपनी देशी भाषाओं की ओर मुड़े और हिन्दी को राष्ट्रभाषा के पद पर प्रतिष्ठित करें। हमें अपनी सभी प्रादेशिक कार्यवाइयाँ अपनी–अपनी भाषाओं में चलानी चाहिए तथा हमारी राष्ट्रीय कार्यवाइयों की भाषा हिन्दी होनी चाहिए।[7]

डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में 14 सितम्बर, 1946 ई0 को संविधान सभा की नियम समिति ने यह निर्णय लिया कि ''संविधान सभा का कामकाज हिन्दुस्तानी या अंग्रेजी में किया जाना चाहिए और अध्यक्ष की अनुमति से कोई सदस्य सदन में अपनी मातृभाषा में भाषण दे सकेगा। संघ समिति ने अपनी रिपोर्ट में यह सिफारिश की थी कि, संघ की संसद की भाषा

हिन्दुस्तानी होगी अैर सदस्यों की अपनी मातृभाषा का प्रयोग करने की छूट होगी। हिन्दी राजभाषा, जनभाषा शंकर दयाल सिंह, पृ024 यहाँ पर यह स्पष्ट कर देना आवश्यक हो जाता है कि यद्यपि आम बोलचाल की भाषा में हिन्दी को राष्ट्रभाषा की संज्ञा दी जाती है, लेकिन भारतीय संविधान में हिन्दी को संघ की राजभाषा का मतलब सुपरिभाषित रूप से भारतीय संघ के सरकारी कामकाज और इसी मकसद से राज्यों के बीच सम्पर्क संवाद की भाषा है। यहाँ पर यह भी ध्यान देने की आवश्यकता है कि संविधान हिन्दी को भारतीय संघ की भाषा का दर्जा देने के बावजूद उसे राज्यों के लिए अनिवार्य नहीं बनाता। उसमें राज्यों की अपनी अलग राजभाषाओं का प्रावधान है। औपचारिक रूप से अंग्रेजी की हैसियत संघ की दूसरी यानी सहयोगी राजभाषा की है। संविधान की आठवीं अनुसूची में संस्कृत, सिंधी, पंजाबी, कोंकणी, मणिपुरी, नेपाली, मलयालम, मराठी, गुजराती, असमिया, उर्दू, उड़िया, कन्नड़, तेलुगु, बंगाली, तमिल, हिन्दी, कश्मीरी, डोगरी, मैथिली और संथाली शामिल हैं। मणिपुरी, नेपाली और कोंकणी 1992 में और डोंगरी, मैथिली और संथाली सन् 2004 ई0 में जोड़ी गई हैं। संविधान सभा ने अंग्रेजी को इस सूची में शामिल करने का प्रस्ताव बिना किसी खास विवाद के खारिज कर दिया गया था। सन् 1959 में अंग्रेजी को शामिल करने का प्रयास दोबारा हुआ, पर पहले की तरह उस समय भी नेहरू उसके पक्ष में नहीं थे। कुल मिलाकर संविधान की दृष्टि से कोई भी एक भाषा भारत की राष्ट्रभाषा नहीं है। दरअसल, आठवीं अनुसूची की हर भाषा राष्ट्रभाषा कही जा सकती है। ऐसी हर भाषा को अपने विकास के लिए भारतीय राज्य के संसाधनों में से हिस्सा माँगने का हक है।[8]

इन सब स्थितियों–परिस्थितियों को देखते हुए जब संविधान सभा का सत्र सन् 1947 ई0 की 14 जुलाई को शुरू हुआ। इस सत्र के दूसरे दिन बाद अर्थात 16 जुलाई, 1947 ई0 को एक संशोधन प्रस्तुत किया गया कि हिन्दुस्तानी के स्थान पर हिन्दी शब्द रखा जाए। तत्कालीन कांग्रेस सरकार के कुछ लोगों ने संविधान सभा के सदस्यों के साथ विचार–विमर्श शुरू हुआ। इस विचार–विमर्श में नेता पक्ष एक तरफ एवं साधारण सदस्य दूसरी ओर बैठे। इस मतदान में हिन्दी के पक्ष में 63 वोट थे और हिन्दुस्तानी के पक्ष में 32 मत पड़े। इसी प्रकार एक दूसरे मतदान में देवनागरी के पक्ष में 63 वोट थे और विपक्ष में 181 मत पड़े। दूसरे दिन संविधान सभा की बैठक में सरदार पटेल ने यह सुझाव दिया कि प्रान्तीय विधान मण्डलों की भाषा के प्रश्न को अभी न किया जाए। 05 अगस्त, 1949 ई0 को कांग्रेस वर्किंग कमेटी ने विभागीय क्षेत्रों के बारे में एक संकल्प तैयार किया।[9]

सबसे दुखद यह बात हुई कि फरवरी, 1948 ई0 को संविधान सभा का प्रारूप प्रस्तुत किया गया उसमें राजभाषा विधेयक नामक कोई उपबंध नहीं था। इस प्रारूप में मात्र इतना ही उल्लेख था कि संसद की भाषा अंग्रेजी या हिन्दी होगी। इसी वर्ष संविधान सभा के प्रारूप के सम्बन्ध में पक्ष–विपक्ष में अनेक मत पड़ते रहें। पं0 जवाहर लाल नेहरू ने एक अखिल भारतीय भाषा की आवश्यकता पर बल दिया और यह भी स्पष्ट किया कि स्वतंत्र देश को अपनी ही भाषा में राज–काज चलाना चाहिए। यह भाषा अन्ततः जनता के मध्य से ही विकसित होगी। (कास्टीटयूएंट एसेम्बली, वाद–विवाद, दिनांक 08 नवम्बर, 1948) इसी समय 10 नवम्बर, 1948 को स्टीयरिंग कमेटी में यह भी निश्चय किया गया कि साथ ही साथ संविधान हिन्दी में भी तैयार होना चाहिए। इसे आश्चर्य ही कहा जाएगा कि संविधान के निर्माण के समय भाषा सम्बन्धी प्रावधानों पर विस्तार से जितनी चर्चा हुई, उतनी चर्चा विश्व के किसी भी देश के संविधान निर्माण के समय नहीं की गई।[10]

संविधान सभा की मीटिंग के लिए समय अतिमहत्वपूर्ण माना जाता है किन्तु संघ की भाषा पर चर्चा के दौरान हिन्दी, अंग्रेजी, हिन्दुस्तानी, संस्कृत और बंगला के पक्ष में दावे पेश किए गए। चर्चा के दौरान सदस्यों ने राजभाषा, राष्ट्रभाषा और लोकसभा शब्दावली का कहीं–कहीं पर्याय रूप में प्रयोग किया गया, जिसका सार अपने भाषण के आरम्भ में गोपाल स्वामी आयंगर ने सदस्यों को बताया–एक बात के बारे में हम लगभग एक ही नतीजे पर पहुँच गए हैं कि हमें एक भारतीय भाषा का चुनाव करना चाहिए। जिसका सम्पूर्ण भारत में समान इस्तेमाल हो, जो संघ की राजभाषा के पद को भी ग्रहण करे। हिन्दी की भागीरथ यात्रा–कन्हैयालाल गांधी, पृ032। इसी समय भाषा के प्रति अपने विचारों को सेठ गोविन्द दास ने भी रखा। आपका मानना था कि–मैं अपने दक्षिण अहिन्दी भाषी प्रदेशों के मित्रों का आभारी हूँ कि उन्होंने कम से कम एक बात को स्वीकार कर लिया है कि देवनागरी लिपि में केवल हिन्दी ही संघ की भाषा हो सकती है, चाहें हम उसे राष्ट्रभाषा कहें या राजभाषा।[11]

पुरूषोत्तम दास टंडन इस बात से सहमत थे कि अहिन्दी भाषा भाषी लोगों की भावनाओं का आदर करते हुए पन्द्रह वर्ष तक अंग्रेजी देश की राजभाषा बनी रहे, परन्तु उन्होंने विधेयक के अनुच्छेद 345 का विरोध किया, जिसके अनुसार किसी राज्य में अंग्रेजी के स्थान पर किसी भारतीय भाषा को प्रांत की भाषा बनाने से पहले वहाँ की विधान सभा को इस विषय में कानून पारित करना होगा। संविधान सभा की हिन्दी भाषा की बहस को ध्यान से अध्ययन करने से ऐसा ज्ञात होता है कि संस्कृत, बंगला और अंग्रेजी के समर्थकों ने अपने पक्ष की बात तो कही, परन्तु हिन्दी का विरोध भी नहीं किया। कुछ लोग जो हिन्दुस्तानी को राजभाषा बनाने के पक्ष में थे, उन्होंने ही हिन्दी का विरोध किया।

हिन्दुस्तानी भाषा के समर्थकों में मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद थे। राजभाषा के नामकरण के बारे में कलाम ने कहा था कि उत्तर भारत में लगभग एक ही भाषा बोली जाती है और इसके तीन नाम हैं–उर्दू, हिन्दी और हिन्दुस्तानी। तत्कालीन राष्ट्रीय कांग्रेस कमेटी ने हिन्दुस्तानी के पक्ष में वोट दिया था, क्योंकि इसका स्वरूप लखनऊ की उर्दू और बनारस तक सीमित नहीं है। यह दुर्भाग्य की बात है कि कांग्रेस के पुराने लोग उस जगह से पीछे हट गए हैं, जिसके लिए वे गांधी जी के जीवन–काल में समर्थक थे। यद्यपि राजभाषा को हिन्दी का नाम दिया गया है।[12]

अनेक दौर की वार्ताओं एवं विमर्श के बाद हिन्दी को स्वीकार किए जाने की बात को लेकर कोई सहमति नहीं बन पाई। यहां प्रश्न हिन्दी के स्वरूप को लेकर भी था कि उसके किन–किन भाषाओं के शब्दों को (अरबी, फारसी, संस्कृत) लिया जाए। इसके साथ ही अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी को राजभाषा बनाने के लिए कितना समय और चाहिए। इस प्रश्न पर सदन में आम सहमत का अभाव था। अंग्रेजी को पन्द्रह वर्ष तक चलाने के लिए एक समिति का गठन किया गया। इस बहस के दौरान जो विचार आए उन्हें ध्यान में रखते हुए संविधान के उपबंधों को जो रूप दिया गया उसे आयंगर सूत्र कहते हैं।[13] प्रस्तुत सूत्र मुंशी आयंगर फार्मूले के नाम से विख्यात अनुच्छेद संविधान के भाग 17 में अनुच्छेद 343 से 351 तक हैं। तथा संविधान के परिशिष्ट में अष्टम अनुसूची है। इस अवसर पर संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद ने बड़े मार्मिक ढंग से घोषणा की कि आज पहली बार हम अपने संविधान में एक भाषा स्वीकार कर रहे हैं जो भारत संघ प्रशासन की भाषा होगी। हमें समय के अनुसार अपने आपको ढालना और विकसित करना होगा। हमने अपने देश का राजनैतिक एकीकरण सम्पन्न किया है। राजभाषा हिन्दी देश की एकता को कश्मीर से कन्याकुमारी

तक अधिक सुदृढ़ बना सकेगी। अंग्रेजी की जगह भारतीय भाषा को स्थापित करने से निश्चय ही और भी एक दूसरे के नज़दीक आएंगे।[14]

मुंशी आयंगार फार्मूले के नाम से प्रसिद्ध अनुच्छेद संविधान के सत्रहवें हिस्से में दर्ज 341 से 351 तक भाषा के बारे में है। अनुच्छेद 343 के अनुसार भारतीय संघ की आधिकारिक भाषा देवनागरी लिपि में होगी। इसके साथ ही संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाले अंकों का अन्तर्राष्ट्रीय रूप होगा।[15] इसके बाद वाले अनुच्छेद के अनुसार राष्ट्रपति को संविधान लागू होने के पाँच साल बाद और फिर हर वर्ष (दस) बाद एक आयोग का गठन करना होगा जो उन्हें राजभाषा हिन्दी के बारे में प्रगति की जानकारी और उसे और आगे बढ़ाने के लिए सुझाव भी देगा। अनुच्छेद 345 और 346 राज्यों को अधिकार देता है कि उपवंधो के अधीन रहते हुए राज्य का विधान–मंडल विधि द्वारा उस राज्य के राजकीय प्रयोजनों में से सब या किसी के लिए प्रयोग के अर्थ उस राज्य में प्रयुक्त होने वाली भाषाओं में से किसी या अनेक को या हिन्दी को अंगीकार कर सकेगा। अर्थात इस राजभाषा अधिनियम के द्वारा किसी भी भाषा या एक से अधिक भाषाओं को किसी खास काम के लिए सभी सरकारी कामों के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं। इस कानून के तहत केवल वही भाषा ही अपनायी जा सकती है जिसे राज्य के कम से कम पन्द्रह फीसदी लोग बोलते हों। इस लिहाज से नागालैण्ड और कुछ केन्द्रशासित प्रदेशों ने अंग्रजी को अपनी राजभाषा घोषित कर रखा है। यह प्रावधान कहता है कि किसी भी राज्य में संविधान पारित होने के ठीक पहले अंग्रेजी जिन राजकीय कामों के लिए इस्तेमाल की जा रही थी, उस समय तक इस्तेमाल होती रहेगी जब तक कि कानून के जरिए उसे ऐसा करने से न रोक दिया जाए।[16]

अनुच्छेद 346 में राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त होने के लिए प्राधिकृत भाषा एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच में तथा किसी राज्य और संघ के बीच में संचार के लिए राजभाषा होगी। कहने का तात्पर्य यह कि दो या दो से अधिक राज्य यह तय कर सकते हैं कि उनके बीच होने वाला सम्पर्क संवाद हिन्दी में होगा।अनुच्छेद 347 तद्विषयक मांग की जाने पर यदि राष्ट्रपति को लगता है तो वे उसे राज्य की राजभाषा घोषित करने का निर्देश दे सकते हैं। यह वास्तव में अनुच्छेद 345 का स्पष्टीकरण है। भारतीय संविधान का भाषा विषयक अनुच्छेद 348–349 में यह स्पष्ट बताया गया है कि जब तक संसद द्वारा अन्य व्यवस्था न की जाए, उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों की कार्यवाही अंग्रेजी में ही होगी, किन्तु किसी राज्य का राज्यपाल राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से अपने राज्य के उच्च न्यायालय में उस राज्य की राजभाषा या हिन्दी का प्रयोग प्राधिकृत कर सकता है। पर संसद और विधानमण्डलों द्वारा पारित विधेयकों, अध्यादेशों, नियमों, विनियमों, अधिनियमों आदि का अंग्रेजी पाठ ही प्राधिकृत पाठ माना जाएगा।[17] इस अनुच्छेद के अवलोकन से यह शंका उत्पन्न होती है कि संविधान में राजभाषा हिन्दी के सम्बन्ध में अनेक प्रावधानों के होते हुए भी क्या इससे देश में अंग्रेजी का स्थान पूर्ववत बने रहने की गारंटी तो नहीं दी गई हैं राजभाषा हिन्दी की वर्तमान उलझी हुई स्थिति में इस प्रश्न का उत्तर ढूँढ़ना दुष्कर ही है, साथ ही अंग्रेजी की प्रधानता में उत्तमोत्तर वृद्धि होने की संभावना है। अनुच्छेद 350 किसी व्यथा के निवारण के लिए संघ या राज्य के किसी पदाधिकारी या प्राधिकारी को यथास्थिति संघ में या राज्य में प्रयोग होने वाली किसी भाषा में अभिवादन देने का प्रत्येक व्यक्ति को हक होगा।

अनुच्छेद 350 ए प्रत्येक राज्य और राज्य के अन्दर प्रत्येक स्थानीय प्राधिकारी का यह प्रयास होगा कि भाषागत अल्पसंख्यक वर्गों के

बालकों को उनकी मातृभाषा में प्राथमिक शिक्षा का अधिकार देता है। यहाँ यह बताना आवश्यक है कि संविधान का अनुच्छेद 29 वह घोषणा करता है कि अल्पसंख्यकों को अपनी भाषाओं और संस्कृतियों की संरक्षा का अधिकार देता है। भारतीय संविधान 351 में भारतीय संघ का दायित्व निश्चित करता है और उस प्रक्रिया का प्रावधान करता है जिसके तहत हिन्दी को देश की सामाजिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बनना है। जिसके तहत हिन्दी भाषा की प्रसार में वृद्धि करना, उसका विकास करना ताकि वह भारत की संस्कृति के सब तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम हो सके, तथा उसकी आत्मीयता में हस्तक्षेप किए बिना हिन्दुस्तानी और अष्ठम् अनुसूची में उल्लिखित अन्य भारतीय भाषाओं के रूप में, शैली और पदावली को आत्मासात करते हुए तथा जहाँ तक आवश्यक था वांछनीय हो, वहाँ उसके शब्द भण्डार के लिए मुख्यतः संस्कृत से तथा गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करना संघ का कर्तव्य होगा।

इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि हिन्दी सभी क्षेत्रीय भाषाओं के शब्द–शैली अपनाकर विकसित होगी, अर्थात उसमें सभी भारतीय भाषाओं का प्रभाव परीलक्षित होगा। इस प्रकार सभी भारतीय भाषाओं के प्रभाव से विकसित हिन्दी का स्वरूप कृत्रिम न होगा क्योंकि भाषा समाज की संस्कृतिक धारणा और आकांक्षाओं का प्रतीत होती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

- ✓ राष्ट्रभाषा हिन्दी–गोपीकृष्ण राठी,मधुकर,गोवर्धनशर्मा,रूपा बुक्स प्रा.लि. एस–12 शापिंक काम्पलेक्स तिलक नगर,जयपुर–302004,प्र.सं.–1995,पृ077
- ✓ हिन्दी भाषा और भारतीय संस्कृति–डॉ0 शंकर दयाल शर्मा–किताबघर, 24 अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली–प्र.सं. 1997,पृ043
- ✓ भारत की भाषा समस्या–डॉ0 राम विलास शर्मा,राजकमल प्रकाशन–1बी,नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज,नई दिल्ली–110002,तृ0सं0–2014,पृ38
- ✓ हिन्दी और उसकी भाषाएँ–विमलेश कान्ति वर्मा,प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1995,पृ066
- ✓ हिन्दी और उसकी उपभाषाएँ, विमलेश कान्ति वर्मा, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1995,पृ066
- ✓ प्रयोजन मूलक भाषा और कार्यकालीन हिन्दी–कृष्ण कुमार गोस्वामी ,कलिंगा पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 1995,पृ066
- ✓ हिन्दी और उसकी उपभाषाएँ, विमलेश कान्ति वर्मा, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1995,पृ066
- ✓ समाज विज्ञान विश्वकोश–खण्ड 4, सं–अभय कुमार दुबे, प्रकाशक राजकमल प्रकाशन 1 बी–नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली–110002,पृ0 1145
- ✓ हिन्दी राजभाषा जनभाषा–शंकर दयाल सिंह, किताबघर नई दिल्ली, 2004,पृ024
- ✓ प्रयोजन मूलक भाषा और कार्यालयी हिन्दी, कृष्ण कुमार गोस्वामी, कलिंगा पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 1995, पृ046
- ✓ हिन्दी की भागीरथ यात्रा–कन्हैयालाल गांधी, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 1998,पृ0331

- ✓ हिन्दी की भागीरथ यात्रा–कन्हैयालाल गांधी, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 1998,पृ039
- ✓ हिन्दी की भागीरथ यात्रा, कृष्ण कुमार गोस्वामी, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 1998, पृ0251
- ✓ प्रयोजन मूलक भाषा और कार्यालयी हिन्दी, कन्हैयालाल गांधी, कलिंगा पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 1995, पृ048
- ✓ गाँधी और राष्ट्रभाषा हिन्दी–डॉ0 सुनीता चौरसिया–कल्पना प्रकाशन–बी 1770, जहांगीरपुरी (नजदीक स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया) दिल्ली–110033,प्र.सं. –2014,पृ163
- ✓ समाज विज्ञान विश्वकोश–खण्ड 4, सं–अभय कुमार दुबे, समाज विज्ञान विश्वकेश–भाग 4 सं–अभय कुमार दुबे प्रकाशक राजकमल प्रकाशन 1 बी–नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली–110002,पृ01145
- ✓ प्रयोजन मूलक भाषा और कार्यालयी हिन्दी, कृष्ण कुमार गोस्वामी, कलिंगा पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 1995, पृ053

Copyright © 2018, Dr. Virendra Singh Yadav. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.